RNI/MPHIN/2013/61414

ISSN 2278-0327
Refereed journal

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
Approved by UGC

ज्योतिर्वेद - प्रस्थानम्

संस्कृत वाङ्मय की शोधपत्रिका - संस्कृत छात्रों की मार्गदर्शिका

षष्ठ वर्ष, चतुर्थ अंक

सितम्बर-अक्टूबर 2017

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

₹ 30

Bharatiya Jyotisham
पर्येति भावयन् लोकान्
भारतीय ज्योतिषम्

विषय-सूची

क्र.	लेख विषय	लेखक	पृ.सं.
१	भाषा के विकास हेतु प्रयोग विज्ञान की आवश्यकता	डॉ. परमेश कुमार शर्मा	02
२	ज्योतिषीय गणना पर आधारित जन्म से पूर्व के संस्कार	डॉ. देश राज शर्मा	04
३	वैदिक संहिताओं में सूर्य एवं सौर ऊर्जा	डॉ. आचार्य बृहस्पति मिश्र	08
४	अष्टाध्यायी-लघुवृत्ति में अव्ययीभावसमास का व्याख्यान	डॉ.महीपाल सिंह	11
५	वाल्मीकिसम्भवम् में छन्द योजना: एक अध्यन	मीनाक्षि कुमारी आर्या	13
६	कालिकापुराणानुसार पूजनविधि विशेषत: देववस्त्र.....	डॉ. विवेकशर्मा	17
७	हिमाचल में ज्योतिष - सर्वेक्षण की आवश्यकता	तिलकराज	20
८	भारतीय वास्तुशास्त्र में जीर्णोद्धार की प्रासङ्गिकता	विजय कुमार	22
९	माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सामाजिक परिपक्वता ...	अजयब सिंह	24
१०	सोनीपत के माध्यमिक विद्यालयों में राष्ट्रीयता की भावना...	अजय कुमार	32
११	पूर्ववर्ती आचार्यों का अप्पयदीक्षित पर प्रभाव 'चित्रमीमांसा'..	दुष्यन्त कुमार	38
१२	ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से वाणिज्य में अर्घ का महत्त्व	मुक्तेश कुमार गौतम	42
१३	वेद एवं इतिहास में लेखन परम्परा में विदुषियाँ	रूपा गौर (चन्द्रोल)	44
१४	श्रीमद्भगवद्गीता एवं उपनिषदों में निष्काम कर्मयोग	राघवेन्द्र सिंह भदौरिया	46
१५	संस्कृत-शब्द चिन्तन	डॉ. आचार्यबृहस्पतिमिश्र	50
१६	आधुनिक उपन्यास और स्त्री जीवन के नए संदर्भ	पूर्णिमा चौधरी	52

पुनरीक्षण समिति

प्रो. विद्यानन्द झा
प्राचार्यचर - राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, भोपाल परिसर, भोपाल

प्रो. क्षेत्रवासी पण्डा
अध्यक्ष - तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति विभाग
बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल

प्रो. भारतभूषण मिश्र
अध्यक्ष - ज्योतिषविभाग,
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, मुम्बई परिसर, मुम्बई

प्रो. हंसधर झा
अध्यक्ष - ज्योतिषविभाग,
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, भोपाल परिसर, भोपाल

डॉ. सनन्दन कुमार त्रिपाठी
वरिष्ठसहायकाचार्य,
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, भोपाल परिसर, भोपाल

ISSN 2278 - 0327

कालिकापुराणानुसार पूजनविधि विशेषतः देववस्त्र, पुष्प, धूप एवं दीप

डॉ. विवेकशर्मा

यद्यपि हमारी सत्य सनातन हिन्दु परम्परा सम्पूर्ण विश्व में सबसे प्राचीन है, तथापि यह आज भी अक्षुण्ण बनी हुई है। कई धर्म संस्कृतियाँ हिन्दु संस्कृति के बाद बनी और समाप्त भी हो गई। किन्तु हिन्दु धर्म आज भी अक्षुण्ण बना हुआ है। इस हिन्दु संस्कृति की अक्षुण्णता का एक मुख्य कारण यह है कि इसकी सभी परम्परायें शास्त्रों में व्याख्यायित हैं। हिन्दु धर्म में प्रचलित धार्मिक मान्यतायें पुराण आदि शास्त्रों में व्याख्यायित हैं। हिन्दु धर्म की सबसे बड़ी विशेषता है, इसकी पूजन या कर्मकाण्ड पद्धति। कर्मकाण्ड में प्रयुक्त होने वाली परम्पराओं का तथ्यात्मक संकलन कई शास्त्रों में किया गया है। शास्त्रों में कर्मकाण्ड का विस्तृत व्याख्यान होने से कर्मकाण्ड की मूल परम्परायें आज भी पूर्णतः प्रचलन में हमें दृष्टिगोचर होती हैं। इस सनातन कर्मकाण्ड पद्धति के सविस्तृत विवेचन के सन्दर्भ में उल्लेखनीय उपपुराण है कालिका पुराण है, जो भगवती काली से सम्बद्ध है।

शास्त्रों में यहाँ तक बतलाया गया है कि पूजन का श्रेष्ठ समय क्या है। कब पूजन करनी चाहिये और कब नहीं, यह भी विविध शास्त्रों में वर्णित किया गया है। यथा कालिका पुराण में कहा गया है कि सूतक (जनन, अशौच) में, क्षौरकर्म में, मैथुनावस्था में, डकार आने में नित्यकर्म को त्याग देना चाहिये। साथ ही जन्म-मरण का अशौच हो या भोजन करते हुये नित्यकर्म नहीं करना चाहिये। इसके अतिरिक्त घुटने के ऊपर चोट लगी हो तो नित्यकर्म नहीं करना चाहिये और घुटने के नीचे खून बहा हो तो नैमित्तिक कर्म भी नहीं करना चाहिये।[1] कालिकापुराणकार का कहना है कि अगर दाँत से खून बह रहा हो तो पूजन से पूर्व उसका उपचार करना चाहिये। दाँत में खून की स्थिति में भगवान् का स्मरण भी नहीं करना चाहिये, अन्यथा साधक नरक को प्राप्त करता है।[2] कालिका पुराण में कहा गया है कि पूजन समय में पूज्य देवता के रूप, आभूषण व वाहन का ध्यान करते हुये प्राणायाम करना चाहिये।[3]

हिन्दु पूजन पद्धति में प्रयुक्त होने वाले धूप, दीप, नैवेद्य, प्रशाद, वस्त्र इत्यादि का भी व्याख्यान कालिका पुराण नामक उपपुराण में किया गया है। इसी क्रम में सर्वप्रथम यदि पूजा में प्रयुक्त होने वाले वस्त्र के विषय में बात करें तो कालिका पुराणकार कहते हैं कि पूजन में सर्वदा लाल रेशमी वस्त्र अर्पित करने चाहिये। जबकि काले और नीले वस्त्र कभी भी पूजन में अर्पित नहीं करने का निर्देश कालिका पुराण में किया गया है।[4]

पूजा में प्रयुक्त होने वाले पुष्पों के विषय में कालिकापुराणकार कहते है कि देवी को बकुल, केशर, कल्हार, चमेली, मन्दार, शाल्मलक, कोमलदूब, सोम्य कुश, कुशमञ्जरी, कमल, बिल्बपत्र एवं रक्तपुष्प विशेष प्रिय हैं।[5] पुष्प की महिमा को प्रतिपादित करते हुये कालिका पुराण में कहा गया है-

त्रिवर्गसाधनं पुष्पं तुष्टिश्रीपुष्टिमोक्षदम्।
पुष्पमूले वसेद् ब्रह्मा पुष्पमध्ये तु केशवः।
पुष्पाग्रे तु महादेवः सर्वे देवाः स्थिता दले॥[6]

पुष्प के विषय में कहा गया है कि पुष्पों से देवता प्रसन्न होते हैं, पुष्पों में देवता वास करते हैं, समस्त चराचर जगत सदैव पुष्प का रसास्वादन करने वाला कहा गया है।[7] अतः इस श्रेष्ठ पुष्प को देवताओं को अर्पित करना चाहिये, क्योंकि वे इससे प्रसन्न होते हैं।[8]

धूप के बिना पूजन की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती। कालिकापुराणकार धूप का स्वरूप बतलाते हुये कहते हैं कि धूप नाक एवं नेत्र छिद्रों को सुख देने वाला हो अर्थात् धूप कभी भी आँख या नाक को कष्ट देने वाला नहीं होना चाहिये। इसके अतिरिक्त कालिका पुराण में बिना ताप के जलने वाला काष्ठ को भी धूप की श्रेणी में रखा गया है। उक्त प्रकार का धूप देवताओं को प्रसन्न करने वाला होता है।[9] कालिका पुराण में धूप के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुये कहा गया है कि धूप से न केवल देवताओं या मनुष्यों अपितु सभी जन्तुओं की घ्राणेन्द्रियों के लिये भी तृप्तिदायक होता है।[10] किन्तु कितना दुःखद है कि आजकल कुछ धूप उद्योगों द्वारा धूप में कृत्रिम गन्ध हेतु रसायनों का प्रयोग कर रहें हैं, जो आँखों और नासा छिद्रों को कष्ट देते हैं। कालिका पुराणकार कहते हैं कि धूप सम्बन्धी तत्त्वों को भूसे आदि के ढेर में डाल कर आग लगाई जाये तो उसके धुएँ को धूप के रूप में अर्पित करना फलदायक नहीं हो सकता।[11] यहाँ भाव यह है कि धूप को भगवान् के सम्मुख श्रद्धापूर्वक अर्पण करना चाहिये। कालिका पुराण के अनुसार श्रीचन्दन, सरल (चीड़ा / चीड़), शाल, कृष्णागुरु, उदय, सुरथ, स्कन्द, लाख, पीतशाल (चन्दन), परिमल, काशलस्थ चूर्ण, नमेरु, देवदार, बेल, खादिर (खैर), पारिजात, हरिचन्दन, बल्लभ आदि के धूप सभी देवताओं को प्रसन्नता देने वाले हैं।[12] धूप के उक्त विवेचन से एक विशेष तथ्य हमारे सामने दृष्टिगोचर होता है कि

हिमाचल प्रदेश के चम्बा में धूप का निर्माण किया जाता है तो उस धूप में आज भी चीड़ के कोयले का प्रयोग किया जाता है। इससे यह सिद्ध होता है कि कालिका पुराण में धूप बनाने की जिस परम्परा का विवेचन है, उसका पालन कहीं न कहीं आज भी होता है। इसके अतिरिक्त अराल (रेशे सहित), श्रीनिवास (कमल), श्रीकर (लालकमल), कर्पूर, पराग, श्रीहर, चमेली, आंवला आदि सभी औषधियों को धूप की श्रेणी मे रखा गया है।[13] आगे कालिकापुराणकार कहते हैं कि यक्षधूप (गुग्गल), वृक्षधूप (तारपीन), श्रीपिष्ट, अगुरु, झर्झर, सुगोल (मैनसिल) आदि की सहायता से धूप का निर्माण करना चाहिये।[14] इसके अतिरिक्त महामाया के पूजन के लिये गुग्गल, कर्पूर आदि से निर्मित धूप महत्त्वपूर्ण बतलाये गये हैं।[15] यहाँ जिस गुग्गल का वर्णन कालिका पुराण में हुआ है, उसका प्रयोग आज भी पूजन में किया जाता है। अत: धूप में गुग्गल के मिश्रण के प्रयोग का जो निर्देश कालिकापुराणकार कर रहें हैं, उसका अनुसरण आज भी किया जाता है। कालिका पुराण में कहा गया है कि धूप में मेदा, मज्जा, सूंघे हुये फूल तथा कुचले हुये फूलों का प्रयोग बिल्कुल नहीं करना चाहिये।[16] धूप को स्थापित करने के स्थान को व्याख्यायित करते हुये कालिकापुराणकार कहते हैं कि धूप कभी भी आसन पर किसी घड़े पर या भूमि पर नहीं रखना चाहिये अपितु किसी शुद्ध आधार पर ही धूप को रखना चाहिये।[17]

दीप का हमारी पूजन पद्धति में विशेष महत्त्व है –

दीपज्योतिः परं ज्योतिः दीपज्योतिर्जनार्दनः ॥

दीप के महत्त्व को उपस्थापित करते हुये कालिकापुराणकार कहते हैं कि दीप से ही लोक जीता या जगमगाता है, दीप धर्मार्थकाममोक्ष को देने वाला है, अत: साधक को दीप के द्वारा ही पूजन करना चाहिये।[18] दीप से लोक के जीने का भाव यह है कि उस समय में केवल दीप ही ऐसा साधन होगा जो समस्त घरों में प्रकाश का साधन होगा, अत: स्पष्ट है कि दीप से ही लोग जीता था। कालिका पुराण में दीपों के सात प्रकार बतलाये गये हैं। जिसमें प्रथम स्थान घी के दीपक का है, तत्पश्चात् तिल, सरसों, राई, दधिज (तारपीन), फलों का रस (राल इत्यादि), तथा बिनौला आदि अन्न के रस के दीपक बतलाये गये हैं।[19] दीपक पात्र के विषय में भी कालिका पुराण में विस्तार से चर्चा की गयी है। कालिका पुराण मे तैजस (धातुओं से बने), दारव (लकड़ी से बने), लौह, मार्तिक्य (मिट्टी से बने), नारिकेल एवं बाँस इन सब से बनने वाले पाँच प्रकार के दीपक बतलाये गये हैं।[20] यहाँ दारु या नारिकेल का दीप पात्र होना चिन्तनीय है, क्योंकि वह दीप पात्र दीपक की शिखा से जल जायेगा। किन्तु सम्भवत: उस लकड़ी के पात्र के अग्र भाग में किसी ऐसी धातु आदि का प्रयोग होता होगा जो ज्वलनशील न हो। कालिका पुराण में दीप की बत्ती को भी पाँच भागों में बाँटा गया है यथा – पद्मसूत्र (कमलनाल के रेशों से बनी), कुशा के मूल भाग से बनी, सन की बनी, रूई से बनी तथा फल के कोश से बनने वाली बत्ती।[21] कालिका पुराण में निर्देशित किया गया है कि सुढौल बत्ती वाला, सुन्दर घी या तेल युक्त एवं अखण्ड दीप ही सर्वदा अर्पित करना चाहिये।[22] कालिका पुराण में निर्देशित किया गया है कि दीपक को कभी भी भूमि पर नहीं रखना चाहिये।[23] साथ ही दीपक के प्रसङ्ग में भूमि के प्रति भारतीय परम्परा की श्रद्धा विशेषत: दृष्टिगोचर होती है, यथा कालिका पुराण में कहा गया है कि दीपक का ताप भूमि को नहीं लगना चाहिये।[24] आगे स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि यदि दीप से भूमि को ताप कोई देता है तो उसे नरक प्राप्त होता है।[25] दीप के ताप से भूमि को कष्ट न पहुँचाने के (कालिकापुराणोक्त) इस तथ्य से भारतीय मनीषा की मातृभूमि के प्रति सहिष्णुता भी प्रकट होती है। कालिकापुराण में बतलाया गया है कि किसी जलती हुयी लकड़ी को दीप के रूप मे अर्पित नहीं करना चाहिये।[26] कालिकापुराणकार कहते हैं कि श्रेष्ठतम दीप वही है जो सर्वदा आँखों को प्रसन्न करने वाला हो, जिसकी ज्वाला दूर तक फैले, जो ताप, शब्द एवं धुएँ से रहित हो, जिस दीप की शिखा बहुत छोटी नहीं हो और जो दीप सुन्दर शिखा एवं लौ युक्त हो।[27] आगे कालिकापुराणकार कहते हैं कि शुद्ध घी इत्यादि से भरा हुआ पात्र वाला तथा दक्षिण की ओर झुकी बत्ती वाला तथा सुन्दर ढंग से जलने वाला दीपक उत्तम कोटि का होता है।[28] अस्थि पात्र में दीपक के प्रयोग को तथा दीपक में चर्बी, मज्जा आदि के प्रयोग को कालिका पुराण में सर्वथा निषेध किया गया है।[29] कालिकापुराणकार का कहना है कि किसी देवता के निमित्त जलाये गये दीपक को प्रयत्नपूर्वक कभी भी बुझाना नहीं चाहिये।[30] अज्ञानता या लोभवश भी अगर दीप को नष्ट किया जाता है तो दीप को नष्ट करने वाला अंधा तथा बुझाने वाला काणा होता है।[31]

इस तरह कालिका पुराण में विविध पूजन विधियों और पूजन उपचारों को विस्तार से व्याख्यायित किया गया है। वस्तुत: कालिका पुराण में वर्णित पूजा के इन अङ्गों को या पूजन पद्धति को आज के समय में व्याख्यायित करना या प्रकाशित करना इसलिये आवश्यक है, क्योंकि भारत वर्ष के लाखों करोड़ों मन्दिरों में तथा प्रत्येक पूजन स्थलों में इन्हीं के द्वारा ही पूजन किया जाता है। अत: इनके ज्ञान से हिन्दु संस्कृति की समृद्ध

परम्परा का ज्ञान स्वयं ही हो जाता है।

सन्दर्भ सूची -

1. जानूर्ध्वं क्षतजे जाते नित्यं कर्म न चाचरेत्।
   नैमित्तिकं च तदधः स्रवद्रक्तो न चाचरेत् ॥
   सूतके च समुत्पन्ने क्षुरकर्मणि मैथुने। धूमोद्गारे तथा वान्ते
   नित्यकर्माणि संत्यजेत्॥ कालिकापुराण,55/90- 91
2. दन्तरक्ते समुत्पन्ने स्मरणं च न विद्यते।
   सर्वेषामेव मन्त्राणां स्मरणान्नरकं व्रजेत् ॥ कालिकापुराण, 55 / 89
3. यस्य देवस्य यद्रूपं तथा भूषणवाहनम्।
   तदेव पूजने तस्य चिन्तयेत् पूरकादिभिः ॥ कालिकापुराण, 57 / 60
4. रक्तं कौशेयवस्त्रं च देयं नीलं कदापि न ॥ का0पु0, 54/22
5. देव्याः प्रियाणि पुष्पाणि बकुलं केशरं तथा।
   माध्यं कह्लारवज्राणि करवीरकुरुण्टकान् ॥
   अर्कपुष्पं शाल्मलकं दूर्वाङ्कुरसुकोमलम्।
   कुशमञ्जरिका दर्भा बन्धूककमले तथा।
   मालूरपत्रं पुष्पं च त्रिसन्ध्यारक्तपर्णके ॥ का0पु0, 54/ 22-23
6. कालिकापुराण, 69 / 79 - 80
7. पुष्पैर्देवाः प्रसीदन्ति पुष्पे देवाश्च संस्थिताः।
   चराचराश्च सकलाः सदा पुष्परसाः स्मृताः ॥ का.पु., 69 / 77
8. परं ज्योतिः पुष्पगतं पुष्पेणैव प्रसीदति ॥ का.पु., 69 / 78
9. नासाक्षिरन्ध्रसुखदः सुगन्धोऽतिमनोहरः।
   दह्यमानस्य काष्ठस्य प्रयतस्येतरस्य च ॥
   परागस्याथवा धूमो निस्तापो यस्य जायते।
   स धूप इति विज्ञेयो देवानां तुष्टिदायकः ॥ का.पु., 69/87-88
10. एतैर्विधूपयेद् देवान् धूमिभिः कृष्णवर्त्मना।
    येषां धूपोद्भवैघ्राणस्तुष्टिं गच्छन्ति जन्तवः ॥ का.पु., 69/97
11. राशिकतैर्न चैकत्र तैर्द्रव्यैः परिधूपयेत्।
    तुषाग्निवर्तुलां कृत्वा न तत् फलमवाप्नुयात्॥का.पु.,69/89
12. श्रीचन्दनं च सरलः शालः कृष्णागुरुस्तथा।
    उदयः सुरथस्कन्दो रक्तविद्रुम एव च ॥
    पीतशालः परिमलो विर्मदी काशलस्था।
    नमेरुर्देवदारुश्च बिल्वसारोऽथ खादिरः ॥
    सन्तानः पारिजातश्च हरिचन्दनवल्लभौ।
    वृक्षेषु धूपाः सर्वेषां प्रीतिदाः परिकीर्तिताः ॥ का.पु.69/90-92
13. अरालः सह सूत्रेण श्रीनिवासः पट्टवासकः।
    कर्पूरः श्रीकरश्चैव परागः श्रीहरामलौ ॥
    सर्वौषधीव्र जातीव वाराहश्चूर्ण उत्कलः।
    जातीकोषस्य चूर्णं च गन्धः कस्तूरिका तथा।
    क्षोदे वृत्ते च गदिता धूपा एते उदाहृताः ॥ का.पु., 69/93 - 94
14. यक्षधूपो वृक्षधूपः श्रीपिष्ठोऽगुरु झर्झरः।
    पुत्रिवाहः पिण्डधूपः सुगोलः कण्ठ एव च ॥
    अन्योन्ययोगा निर्यासा धूपा एते प्रकीर्तिताः ॥ का.पु., 69/95-96
15. यक्षधूपः पुत्रिवाहः पिण्डधूपः सुगोलकः।
    कृष्णागुरुः सकर्पूरो महामायाप्रियः स्मृतः ॥
    वृक्षधूपेन वा देवीं महामायां प्रपूजयेत् ॥ का.पु., 69 / 100
16. मेदोमज्जासमायुक्तान् न धूपान् विनियोजयेत्।
    परकीयांस्तथाघ्रातांस्तेऽपि कृत्याभिमर्दितान् ॥ का.पु. 69/101
17. न भूमौ वितरेद् धूपं नासने न घटे तथा।
    यथातथाधारगतं कृत्वा तद् विनिवेदयत् ॥ का.पु. 69/103
18. दीपेन लोकाञ्जयति दीपस्तेजोमयः स्मृतः।
    चतुर्वर्गप्रदो दीपस्तस्माद् दीपर्यजेच्छियम् ॥ का.पु. 69/ 107
19. घृतप्रदीपः प्रथमस्तिलतैलोद्भवस्ततः।
    सार्षपफलनिर्यासजातो वा राजिकोद्भवः॥
    दधिजश्चान्नजश्चैव दीपाः सप्त प्रकीर्तिताः॥ का.पु.69/108 -109
20. तैजसं दारवं लौहं मार्तिक्यं नारिकेलजम्।
    तृणध्वजोद्भवं वापि दीपपात्रं प्रशस्यते ॥ का.पु., 69/111
21. पद्मसूत्रभवा दर्भगर्भसूत्रभवाऽथवा।
    शणजा बादरी वापि फलकोषोद्भवा तथा।
    वर्तिका दीपकृत्येषु सदा पञ्चविधाः स्मृताः॥ का.पु. 69/110
22. सुवृत्तवर्तिः सुस्नेहः पात्रमग्नः सुदर्शनः।
    सूच्छाये वृक्षकोटौ तु दीपं दद्यात् प्रयत्नतः॥ का.पु. 69/116
23. दीपवृक्षाश्च कर्तव्यास्तैजसाद्यैस्तु भैरव।
    वृक्षेषु दीपो दातव्यो न तु भूमौ कदाचन ॥ का.पु. 69/112
24. तस्माद् यथा तु पृथिवी तापं नाप्नोति वै तथा।
    दीपं दद्यान्महादेव्यै अन्येभ्योऽपि च भैरव ॥ का.पु. 69/114
25. कुर्वन्तं पृथिवीतापं यो दीपमुत्सृजेन्नरः।
    स ताम्रतापं नरकं प्राप्नोत्येव शतं समाः ॥ का.पु.,69/115
26. उन्मुकं नैव दीपार्थे कदाचिदपि चोत्सृजेत् ॥ का.पु. 69/131
27. नेत्राह्लादकरः स्वर्चिर्दूरतापविवर्जितः।
    सुशिखः शब्दरहितो निर्धूमो नातिह्रस्वकः ॥
    दक्षिणावर्तवर्तिस्तु प्रदीपः श्रीविवृद्धये ॥ का.पु., 69/118-119
28. दीपवृक्ष स्थिते पात्रे शुद्धस्नेहप्र पूरिते।
    दक्षिणावर्तवर्त्या तु चारुदीप्तः प्रदीपकः ॥
    उत्तमः प्रोच्यते पुत्र सर्वतुष्टिप्रदायकः॥ का.पु., 69/120-121
29. वसामज्जास्थिनिर्यासैः स्नेहैः प्राण्यङ्गसम्भवैः।
    प्रदीपं नैव कुर्यात्तु कृत्वा पङ्केऽवसीदति ॥
    अस्थिपात्रेऽथवा पच्येद् दुर्गन्धास्थिपवासिनि।
    नैव दीपः प्रदातव्यो विबुधैः श्रीविवृद्धये॥ का.पु.,69/126-127
30. नैव निर्वापयेद् दीपं कदाचिदपि यत्नतः।
    सततं लक्षणोपेतं देवार्थमुपकल्पितम् ॥ कालिकापुराण, 69 /128
31 न हरेदज्ञानतो दीपं तथा लोभादिना नरः।
    दीपहर्ता भवेदन्धः काणो निर्वापको भवेत् ॥ का.पु. 69 / 129

सहायकाचार्य, संस्कृतविभाग
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला
जिला कांगड़ा, हिमाचलप्रदेश।
दू0 09459050303, 98168-23805